Title- औलीकर (350 CE - 550 CE)

(B.A. Second Year, Forth Semestar)

Dr. Rajesh Kumar Tripathi
Assistant Professor
Ancient Indian History & Archaeology

औलीकरस (संस्कृत : औलीकर) एक प्राचीन भारतीय कबीले थे। इस कबीले से जुड़े दो राजघरानों ने मध्य प्रदेश राज्य के वर्तमान पश्चिमी मालवा क्षेत्र पर ग से शासन किया। मंदसौर स्तंभ शिलालेख में , यशोधर्मन का दावा है कि वह अब लाहिता (ब्रह्मपुत्र नदी) के पड़ोस से "पश्चिमी महासागर" (पश्चिमी हिंद महासागर) और हिमालय से पर्वत महेंद्र तक के क्षेत्र को नियंत्रित करता है। उन्होंने यह भी दावा किया कि उन्होंने सोंदनी में हूणों को हराया।

एपिग्राफिकल खोजों ने दो अलग-अलग शाही घरों को प्रकाश में लाया है, जो खुद को औलीकार कहते हैं और दशपुरा (वर्तमान मंदसौर) से शासन करते हैं। पहला राजघराना, जिसने दशपुरा से शासन किया था, उत्तराधिकार के क्रम में निम्नलिखित राजाओं में शामिल थे: जयवर्मा, सिंहवर्मा, नरवर्मा, विश्ववर्मा और बंधुवर्मा।

1983 में खोजे गए रिस्तल पत्थर के स्लैब शिलालेख ने एक और शाही घराने को प्रकाश में लाया, जिसमें उत्तराधिकार के क्रम में निम्नलिखित राजा शामिल थे: द्रुमवर्धन, जयवर्धन, अजीवर्धन, विभीषणवर्धन, राज्यवर्धन और प्रकाशशर्मा , जिन्होंने तोरामन को हराया। सभी सम्भावनाओं में, यशोधर्मन भी इसी घर से ताल्लुक रखता था और वह प्रकाशधर्म का पुत्र और उत्तराधिकारी था। [५] [६] यशोधर्मा ने मिहिरकुला को हराया और मालवा क्षेत्र को हूणों से मुक्त कराया । मालवा पर औलीकरों का शासन उसके साथ समाप्त हो गया।

औलीकरों की उत्पत्ति

उनके शिलालेखों में औलीकरों या ओलीकारस (बिहार कोटरा शिलालेख में वर्णित) की उत्पत्ति के बारे में कुछ भी उल्लेख नहीं किया गया है। इस तथ्य के आधार पर कि, उन्होंने अपने पहले राजघराने में गुप्तों के सामंत होने के बावजूद अपने सभी शिलालेखों में गुप्त युग का उपयोग करने के लिए मालवा संवत का उपयोग किया, इतिहासकार डीसी सिरकर ने उन्हें मालवों का कबीला माना। यह वंश उत्तर-पश्चिम से अपने प्रवास के दौरान *दशरका* क्षेत्र (वर्तमान पश्चिमी मालवा) में बस गया। उनके विचार का समर्थन केके दासगुप्ता और केसी जैन ने किया।

पहला राजघराना

पहले राजघराने के संबंध में प्रारंभिक जानकारी नरवर्मा के दो शिलालेखों, मंदसौर शिलालेख, मालवा संवत 461 (404 CE) और बिहार कोटरा शिलालेख, मालव संवत 474 (417 CE) से ज्ञात है। इस घर के संस्थापक जयवर्मा हैं। वह अपने पुत्र, सिम्भावर्मा द्वारा सफल हुआ, जिसका उल्लेख *क्षिति* (राजा) के रूप में है। उनके पुत्र और उत्तराधिकारी नरवर्मा का उल्लेख *पार्थिव* (राजा) और *महाराजा के रूप में किया गया है*। उनका *महाकाव्य सिंघवक्रांतगामी* (एक शेर की चाल के साथ चलने वाला) था। नरवर्मा का उत्तराधिकार उनके पुत्र विश्ववर्मा द्वारा किया गया, जिनका उल्लेख विष्णुवर्मन के मालव संवत 480 (423 ई.प.) के गंगाधर पाषाण शिलालेख में मिलता है। गंगाधर पत्थर के शिलालेख में उनके मंत्री

मयूराक्षका द्वारा एक मत्रिका मंदिर के निर्माण का रिकॉर्ड है। मयूरक्षका ने विष्णु को समर्पित एक मंदिर का भी निर्माण किया। विश्वकर्मा अपने पुत्र बन्धुवर्मा द्वारा सफल हुए, जिन्हें रेशम-बुनकरों के मालवा संवत 529 (474 ई.) के मंदसौर पत्थर शिलालेख में कवि वत्सभट्टी द्वारा विलोपित किया गया है। यह शिलालेख हमें सूचित करता है कि वह गुप्त सम्राट कुमारगुप्त प्रथम का एक सामंत था। यह उनके शासनकाल के दौरान, सूर्य को समर्पित एक मंदिर का निर्माण मालवा संवत 493 (436 सीई) में दशापुरा में रेशम-बुनकरों के गिल्ड द्वारा किया गया था। इस मंदिर का जीर्णोद्धार 473 ईस्वी में उसी गिल्ड द्वारा कराया गया था।

मध्यवर्ती अवधि

दशापुरा का इतिहास बंधुवर्मा के बाद अस्पष्ट रहा। मंदसौर के शिलालेख में मालवा संवत 524 (467 CE) लिखा गया है, जो कि रावला द्वारा लिखा गया था, जिसने दशापुरा के एक राजा का नाम प्रभाकर रखा था, जिसने गुप्तों के दुश्मनों को हराया था। दत्ताभट्ट उनकी सेना के कमांडर थे, जिनके शिलालेख *लोकोतरा विहार* में इस अभिलेख में दर्ज हैं। प्रभाकर के तुरंत बाद, एक और औलिकारा शाही घर सत्ता में आया, जिसके बारे में हमें रिस्तल शिलालेख से पता चला। इन दोनों राजघरानों के बीच सटीक संबंध निश्चित नहीं है।

दूसरा शाही घर

सीतामऊ के पास रिस्तल में 1983 में खोजा गया एक पत्थर का शिलालेख, औलिकिक परिवार से संबंधित एक और शाही घराने को प्रकाश में लाया गया। यह शिलालेख मालवा संवत 572 (515 CE) कवि वासुला द्वारा लिखा गया है, जो प्राचीन संस्कृत में कक्का के पुत्र हैं। प्रयुक्त स्क्रिप्ट 5 वीं -6 वीं शताब्दियों के लिए गुप्त रूप से गुप्तकालीन ब्राह्मी है। पहले के शाही घर के विपरीत, यह शाही घर कभी भी गुप्त सामंत नहीं था। रिस्तल शिलालेख में इस घर के संस्थापक के रूप में द्रुमवर्धन का उल्लेख है। उन्होंने *सेनापति* की उपाधि धारण की। वह अपने बेटे जयवर्धन द्वारा सफल हुआ, जिसने एक दुर्जेय सेना की कमान संभाली। उनका उत्तराधिकार उनके पुत्र अजीतवर्धन ने किया। रिस्तल शिलालेख के अनुसार, वह लगातार सोमा बलिदान करने में लगे हुए थे। अजीतवर्धन को उनके पुत्र विभीषणवर्धन ने उत्तराधिकारी बनाया। रिस्तल शिलालेख में उनके महान गुणों के लिए उनकी प्रशंसा की गई थी। विभीषणवर्धन के पुत्र और उत्तराधिकारी राज्यवर्धन ने अपने पैतृक राज्य का विस्तार किया। राज्यवर्धन का उत्तराधिकार उनके पुत्र प्रकाशधर्मा ने किया।

प्रकाशधर्म

प्रकाशधर्मा इस वंश का एक उल्लेखनीय राजा था, जिसने *आदिराज* की उपाधि *धारण की थी*। रिस्तल शिलालेख हमें उनकी उपलब्धियों के बारे में जानकारी देता है। यह प्रकाशधर्म के एक *राजस्थानी* (वाइसराय) भगवद्दोष द्वारा रिस्तल में एक टैंक और एक शिव मंदिर के निर्माण को रिकॉर्ड करता है। इस शिलालेख में उल्लेख है कि प्रकाशधर्मा ने हुना शासक तोरामाना को हराया, अपने शिविर को बर्खास्त कर दिया और अपने हरम की महिलाओं को निकाल लिया था। उनके शासनकाल के दौरान रिस्तल में निर्मित टैंक का नाम उनके दादा के नाम पर विभीषणसारा रखा गया था। उन्होंने दशापुरा में ब्रह्मा को समर्पित एक मंदिर का भी निर्माण किया। विक्रम विश्वविद्यालय , उज्जैन की एक टीम द्वारा मंदसौर में खुदाई के दौरान, वीएस वाकणकर के नेतृत्व में, उनके दो शीशों को सील कर दिया गया था, जो कि *श्रीप्रकाशधर्मा* को लगे थे। सभी संभावनाओं में वे अपने पुत्र यशोधर्मा विष्णुवर्मा द्वारा सफल हुए थे। एक अविभाजित खंड मंदसौर शिलालेख एक सूजर शासक आदित्यवर्धन और उनके सामंत *महाराजा* गौरी का नाम प्रदान करता है। आदित्यवर्धन की पहचान हाल ही में एक इतिहासकार अश्विनी अग्रवाल ने प्रकाशधर्म से की है। छोटा सदरी शिलालेख में मालवा संवत 547 (490 ईस्वी) अंकित है और भ्रामरासोमा द्वारा

लिखित, मित्रसोमा का पुत्र आदित्यवर्धन के सामंती शासक *महाराजा* गौरी की वंशावली की आपूर्ति करता है। इस मानवयानी क्षत्रिय परिवार का पहला शासक पुण्यसोमा था। उनका उत्तराधिकार उनके पुत्र राज्यवर्धन ने लिया। राष्ट्रवर्धन राज्यवर्धन के पुत्र थे। राश्ट्रवर्धन के पुत्र और उत्तराधिकारी यशगुप्त थे। इस परिवार का अंतिम शासक, गौरी यशगुप्त का पुत्र था। उन्होंने अपनी मृतक मां की योग्यता के लिए दशापुरा में एक टैंक की खुदाई की। इस शिलालेख में एक राजकुमार, गोभट्ट के नाम का भी उल्लेख है, लेकिन गौरी के साथ उसके संबंधों का पता नहीं है।

यशोधर्मा

यशोधर्मन् छठी शताब्दी के आरम्भिक काल में मालवा के महाराजा थे। छठी शती ई0 के द्वितीय चरण में मालवा प्रांत के स्थानीय शासक के रूप से आगे बढ़कर **यशोधर्मन्** पूरे उत्तरी भारत पर छा गया। उसका उदय उल्कापात की भाँति तीव्र गति से हुआ था और उसी की भाँति बिना अधिक स्पष्ट प्रभाव छोड़े वह इतिहास से लुप्त हो गया। यशोधर्मन की उत्पत्ति और प्रारंभिक इतिहास के विषय में कुछ नहीं ज्ञात है। उसके एक अभिलेख में उसे 'औलिकर वंश' का कहा गया है। इस वंश के लोग पाँचवीं शताब्दी के मध्य में गुप्त साम्राज्य के सामन्त के रूप में मालवा पर शासन कर रहे थे। किन्तु उसके बाद लगभग सौ वर्षो के लिये इस वंश की कोई सूचना नहीं मिलती। गुप्तों की शक्ति क्षीण हो चली थी। वाकाटकों और हूणों के आक्रमण के कारण मालवा की राजनीतिक दशा अस्थिर थी। ऐसे में यशोधर्मन् जैसे महत्वाकांक्षी और योग्य व्यक्ति के लिये अपना प्रभाव बढ़ाना सरल था। यशोधर्मन् के विषय में हमारा ज्ञान मंदसौर से प्राप्त उसके दो अभिलेखों तक ही सीमित है। एक अभिलेख में कहा गया है कि उसका प्रभुत्व लौहित्य (ब्रह्मपुत्र) से महेंद्र पर्वत (गंजाम जिला) तक और हिमालय से पश्चिमी सागर तक फैला था। यह विवरण परंपरागत दिग्विजय का है। इन प्रशस्तियों में अतिशयोक्ति का अंश अवश्य होगा किंतु इस प्रकार के दावे नितांत निराधार नहीं कहे जा सकते। अभिलेख में यह भी कहा गया है कि असका अधिकार उन प्रदेशों पर भी था जो गुप्त राजाओं और हूणों के भी अधिकार में नहीं थे। उसके प्रांतपाल अभयदत्त के अधिकार में विंध्य और पारियात्र के बीच का प्रदेश था जो अरब सागर तक फैला था। इस विस्तृत साम्राज्य की विजय के संबंध में उसने किन किन राजवंशों को पराजित किया, इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता। अभिलेख में उसके द्वारा पराजित शत्रुओं में केवल मिहिरकुल का हो नाम दिया गया है। गुप्त नरेश बालादित्य ने भी मिहिरकुल को पराजित किया था। इस घटना के साथ यशोधर्मन् के कृत्यों को कालक्रम में रखना कठिन है। यशोधर्मन् और बालदित्य की विजय एक ही घटना है, अथवा यशोधर्मन् ने बालादित्य के सामंत के रूप में ही मिहिरकुल को पराजित कर बाद में अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित की, या मिहिरकुल दो स्थानों पर पराजित हुआ- पश्चिम में यशोधर्मन् और पूर्व में बालादित्य के द्वारा या वह पहले यशोर्ध्मन् और उसके बाद बालादित्य के हाथों पराजित हुआ आदि संभावनाओं में से किसी एक को निश्चयात्मक बतलाना संभव नहीं। युवान् च्वाड़् के अनुसार बालादित्य के हाथों पराजित होने पर भी मिहिरकुल ने अपना सिर झुकाना नहीं स्वीकार किया और कश्मीर में जाकर अपना अधिकार स्थापित किया। यदि इससे मंदसोर अभिलेख में मिहिरकुल के वर्णन की समानता देखी जाय तो कहा जा सकता है कि मिहिकुल की द्वितीय पराजय यशोधर्मन् के ही हाथों हुई थी। शक्तिशाली हूणों और गुप्तों को पराजित करना यशोधर्मन् की प्रमुख उपलब्धियाँ थी। उसका उत्कर्ष काल 528 ई0 के बाद था। किंतु उसकी विजय स्थायी नहीं रह सकीं। 543 ई0 में हमें यशोधर्मन् के प्रभुत्व का कोई प्रभाव शेष नहीं मिलता। फिर भी उसका यह महत्व अवश्य था कि उसने अपने उदाहरण से अन्य सामंतों को उत्साहित किया जिनकी बढ़ती शक्ति और तज्जनित संघर्ष के फलस्वरूप गुप्त साम्राज्य छिन्न भिन्न हो गया। यशोधर्मन् का दूसरा नाम **विष्णुवर्धन** था। उसने राजधिराजपरमेश्वर और सम्राज्ट की उपाधि धारण की थी। वह शिव का भक्त था। अभिलेख में उसके अच्छे शासन और उसके सदगुणों के कई उल्लेख हैं। उसकी तुलना मनु, भरत, अलर्क और मांधाता से की

गई है। कि अपने समय में ही उसे विशेष गौरव प्राप्त हुआ था। इस राजवंश के सबसे प्रमुख राजा यशोधर्मा विष्णुवर्धन थे। यशोधर्मा के दो समान अविभाजित मंदसौर विजय स्तंभ शिलालेख (सोंडनी में, वर्तमान मंदसौर शहर के पास) और एक पत्थर का शिलालेख, मालवा संवत 589 (532 CE), उसकी सैन्य उपलब्धियों को दर्ज करता है। इन सभी शिलालेखों को सबसे पहले जॉन फेथफुल फ्लीट द्वारा प्रकाशित किया गया था। यह पक्का शिलालेख, जिसे कवि वासुला ने भी लिखा था, काक्का के पुत्र का कहना है कि उनके पैरों की पूजा हुना शासक मिराकुला ने की थी । इनमें यह भी कहा गया है कि उसके सामंतों ने पूर्व में *लुआहिता* (ब्रह्मपुत्र) नदी के आसपास के क्षेत्र में, दक्षिण में *महेंद्र* पर्वत (पूर्वी घाट) से, उत्तर में हिमालय और पश्चिम में *पसचिमा पयोधी* (अरब सागर) तक। श्रद्धांजलि देने के लिए उनके साम्राज्य की सीट पर आए। उन्होंने उपाधियाँ, *राजाधिराज* और *परमेस्वर* ग्रहण की। यशोधर्मा के दिनांकित शिलालेख से हमें पता चलता है कि ५३२ ईस्वी सन् में, निर्दोशा, उनकी *राजस्थानी* विंध्य और *पारियात्र* (अरावली) और उनके मुख्यालय *दशपुरा के* बीच के क्षेत्र पर शासन कर रही थी। संभवत: औलीकरों का शासन यशोधरमा के साथ समाप्त हो गया। मंदसौर स्तंभ के शिलालेख की पंक्ति 5 में, यशोधर्मन ने अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के लिए और अब (पश्चिमी) लाहित्य (ब्रह्मपुत्र नदी) के पड़ोस से "पश्चिमी महासागर" (पश्चिमी हिंद महासागर) तक के क्षेत्र को नियंत्रित करने के लिए कहा है। हिमालय पर्वत महेंद्र को । इस प्रकार यशोधर्मन ने हूणों और गुप्तों से विशाल क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की, हालांकि उनका अल्पकालिक साम्राज्य अंततः 530-540 सीई के बीच बिखर जाएगा।

औलिकर के उत्तराधिकारी

1979 में विक्रम विश्वविद्यालय , उज्जैन की टीम द्वारा एक इमारत की नींव से मंदसौर उत्खनन के दौरान गिरिजा शंकर रुणवाल द्वारा एक अज्ञात अज्ञात शासक कुमारवर्मा का एक खंडित अछूता शिलालेख मिला। यह शिलालेख, 5 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध की शुरुआत में, मुख्यतः चार वंशीय शासकों में एक राजवंश को रिकॉर्ड करता है: यज्ञदेव, वीरासोमा, उनके पुत्र भास्करवर्मा और उनके पुत्र कुमारवर्मा। वाकणकर ने उन्हें औलीकारस के रूप में दावा किया और वीवी मिराशी ने इस वंश को एक अलग दावा किया, जिसने औलीकरों को हराया और सफल हुआ। लेकिन इनमें से किसी भी सिद्धांत को अन्य इतिहासकारों का समर्थन नहीं मिला। संभवत: कलचुरियों ने औलीकरों को सफल किया, क्योंकि कलचुरी राजा कृष्णराज और उनके पुत्र शंकरगण औलीकरों के तुरंत बाद उसी क्षेत्र पर शासन करते पाए जाते हैं। मैत्रक भी औलीकरों के उत्तराधिकारी हो सकते हैं।

औलिकारा प्रशासन

औलीकरों के केवल तीन कार्यालयों को उनके एपिग्राफिकल रेकॉर्डर्स से जाना जाता है: *सेनापति* (कमांडर-इन-चीफ), *अमात्य* (मंत्री) और *राजस्थानी* (वाइसराय)। *राजस्थानी* के कार्यालय की सटीक प्रकृति, जो कई शिलालेखों में उल्लिखित है, उनसे स्पष्ट नहीं है। जॉर्ज बुहलर ने *राजस्थानिया* को वाइसराय के रूप में प्रस्तुत किया, और उनका विचार ज्यादातर स्वीकार किया गया। ऐसा लगता है कि औलीकरों का *राजस्थानी* कार्यालय शशिदत्त के दिनों से *नायगामा* परिवार में वंशानुगत हो गया था। शशिदत्त के पुत्र वराह की पहचान चित्तौड़गढ़ के वराहदास के साथ एक इतिहासकार डीसी सिरकार द्वारा उनके पोते के शिलालेख से की गई है। वराह के पुत्र रवकीर्ति राज्यवर्धन के अधीन एक *अमात्य* थे। उनकी पत्नी भानुगुत्पा से उनके तीन बेटे थे: भगवदोष, अभयदत्त और दोसुकुम्भा। भगवद्दोष प्रकाशशर्मा के अधीन एक *राजस्थानी* था। उनके छोटे भाई अभयदत्त को उनके बाद एक *राजस्थानी* नियुक्त किया गया था चित्तौड़गढ़ खंड के शिलालेख में अभयदत्त के बारे में दशापुरा और *मध्यमा के राजस्थानी* के रूप में उल्लेख किया गया है। मंदसौर शिलालेख में मालवा संवत 589 अभयदत्त का वर्णन *राजस्थान के* रूप में विंध्य और *पारियात्र के* बीच है। उनके भतीजे और दोशकुम्भा के बेटे, निरदोशा ने उन्हें उसी क्षेत्र

के *राजस्थानी* के रूप में सफल किया। निरोदशा के बड़े भाई धर्मदास औलीकरों के अधीन एक उच्च पदस्थ अधिकारी भी थे, लेकिन उनके सटीक पदनाम का पता नहीं है।

कला और वास्तुकला

सबसे महत्वपूर्ण स्मारकों जो निश्चित रूप से औलीकर काल के हैं, यशधर्म विष्णुवर्धन के दो स्वतंत्र विजय स्तंभ हैं। दक्षिण पूर्व मंदसौर के उपनगर सोंदनी में स्थित ये लगभग एक जैसे खंभे बलुआ पत्थर से बने हैं। पूरे स्तंभ की ऊँचाई ४४ फीट ५ इंच है। इसका वर्ग आधार ४ फीट ५ इंच और चौड़ा ३ फीट ४ इंच है। बेल के आकार की राजधानी 5 फीट 2 फीट ऊंची है। इसका शाफ़्ट सोलह मुखी दौर है। ज्यादातर शायद एक मुकुट मूर्ति थी, जो नहीं मिली है।

मंदसौर (दशपुर) अभिलेख

दशपुर अवंति (पश्चिमी मालवा) का प्राचीन नगर था, जो मध्य प्रदेश के ग्वालियर क्षेत्र में उस नाम के नगर से कुछ दूर उत्तर पश्चिम में स्थित आधुनिक मंदसौर है। भारतीय इतिहास के प्राचीन युग में उत्तर भारत में जब भी साम्राज्य स्थापित हुए, अवंति प्राय: उनका एक प्रांत रहा। दशपुर उसी में पड़ता था और कभी कभी वहाँ भी शासन की एक इकाई होती थी। दशपुर का कोई मूल्यवान ऐतिहासिक उल्लेख गुप्तयुग के पहले का नहीं मिलता। कुमारगुप्त प्रथम तथा द्वितीय और बंधुवर्मा का मंदसोर में ४३६ ई. (वि॰सं॰ ४९३) और ४७२ ई. (वि॰सं॰ ५२९) का वत्सभट्टि विरचित लेख मिला है, जिससे ज्ञात होता है कि जब बंधुवर्मा कुमारगुप्त प्रथम का दशपुर में प्रतिनिधि था (४३६ ई.), वहाँ के तंतुवायों ने एक सूर्यमंदिर का निर्माण कराया तथा उसके व्यय का प्रबंध किया। ३६ वर्षों बाद (४७२ ई.) ही उस मंदिर के पुनरुद्वार की आवश्यकता हुई और वह कुमारगुप्त द्वितीय के समय संपन्न हुआ। बंधुवर्मा संभवत: इस सारी अवधि के बीच गुप्तसम्राटों का दशपुर में क्षेत्रीय शासक रहा। थोड़े दिनों बाद हूणों ने उसके सारे पार्श्ववर्ती प्रदेशों को रौंद डाला और गुप्तों का शासन वहाँ से समाप्त हो गया। ग्वालियर में मिलनेवाले मिहिरकुल के सिक्कों से ये प्रतीत होता है कि दशपुर का प्रदेश हूणों के अधिकार में चला गया। किंतु उनकी सफलता स्थायी न थी और यशोधर्मन् विष्णुवर्धन् नामक औलिकरवंशी एक नवोदित राजा ने मिहिरकुल को परास्त किया। मंदसोर से वि॰सं॰ ५८९ (५३२ ई.) का यशोधर्मा का वासुल रचित एक अभिलेख मिला है, जिसमें उसे जनेंद्र, नराधिपति, सम्राट्, राजाधिराज, परमेश्वर उपाधियाँ दी गई हैं। उसका यह भी दावा है कि जिन प्रदेशों को गुप्त सम्राट् भी नहीं भोग सके, उन सबको उसने जीता और नीच मिहिरकुल को विवश होकर पुष्पमालाओं से युक्त अपने सिर को उसके दोनों पैरों पर रखकर उसकी पूजा करनी पड़ी। यशोधर्मा मध्यभारत से होकर उत्तर प्रदेश पहुँचा और पंजाब में मिहिरकुल की शक्ति को नष्ट करता हुआ सारा गुप्त साम्राज्य रौंद डाला। पूर्व में लौहित्य (उत्तरी पूर्वी भारतीय सीमा की लोहित नदी) से प्रारंभ कर हिमालय की चोटियों को छूते हुए पश्चिम पयोधि तक तथा दक्षिण-पूर्व से महेंद्र पर्वत तक के सारे क्षेत्र को स्वायत्त करने का उसने दावा किया है। दशपुर को यशोधर्मा ने अपनी राजधानी बनाया। वर्धन्नामांत दशपुर के कुछ अन्य राजाओं की सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। मंदसोर से ही अभी हाल में प्राप्त होनेवाले एक अभिलेख से आदित्यवर्धन् तथा वराहमिहिर की बृहत्संहिता (छठी शती) से अवंति के महाराजाधिराज द्रव्यवर्धन की जानकारी होती है।